भूमि हड़पकर खाद्यान्न सुरक्षा

विनता विश्वनाथन

विश्व के कई रईस देशों के लिए खाद्य सुरक्षा एक बड़ी समस्या है जो आने वाले सालों में चुनौती बनी रहेगी। कुछ अन्य देश भयंकर आर्थिक और खाद्य संकट से गुज़र रहे हैं। इन परिस्थितियों में एक प्रवृत्ति उभरती नज़र आ रही है - दूसरे देशों की तुलना में रईस और साथ में खाद्य असुरक्षित देशों की सरकार व निजी कम्पनियों द्वारा गरीब देशों में बड़े पैमाने पर कृषि ज़मीन को खरीदना या पट्टा लेना। यह इतना प्रचलित हो गया है कि इसके लिए एक नाम गढ़ा गया है - लैंड-ग्रैब।

लैंड-ग्रैब का मतलब है कि जहां ज़्यादातर छोटी ज़मीन पर किसान खाद्य फसल उगा रहे थे, वहां अब बड़ी-बड़ी कम्पनियां और समूह पैठ जमाने लगे हैं और सीमित खाद्य संसाधन उनके हाथों में जा रहा है। इसके कुछ फायदे भी हैं और कुछ खतरे भी। लेकिन इस बहस में उतरने के लिए यह जानना ज़रूरी है कि आखिर लैंड-ग्रैब वाली ज़मीन पर खेती करके खाद्य सुरक्षा का हल निकल सकता है या नहीं।

ऐसा एक विश्लेषण इटली की मारिया क्रिस्टीना रूली और अमेरिका के पाओलो ड-ओरिको ने मिलकर किया है जो हाल ही में *एन्वायर्मेंटल रिसर्च लेटर्स* पत्रिका में छपा है।

इन दोनों ने हिसाब लगाया है कि सन 2000 से लगभग 3.1 करोड़ हैक्टर कृषि ज़मीन विश्व भर में विदेशी निवेशकों ने खरीदी है। ज़्यादातर सौदे 2008 के बाद ही हुए हैं और अफ्रीका और एशिया के जिन देशों में ये ज़मीनें प्राप्त की गई हैं, वे विश्व के सबसे गरीब, भूखे और कुपोषित देश हैं।

जिस ज़मीन की यहां बात हो रही है वह 200 हैक्टर से ज़्यादा क्षेत्रफल वाली ज़मीनें हैं। इनके बारे में खरीददारों का कहना है कि वे इसका इस्तेमाल खेती-बाड़ी के लिए ही करेंगे। अलग-अलग देशों में हुए और हो रहे सौदे मेज़बान सरकारों की सहमति से, और कहीं-कहीं उनकी मदद से हो रहे हैं।

और यह सब कृषि में बेहतर निवेश के नाम पर हो रहा है। ये लैंड-ग्रैब डील्स किसके निरीक्षण में हो रही हैं, क्या कमिटमेंट है खरीददारों के कि वही फसलें उगाएंगे जो पहले उस ज़मीन पर थीं, क्या गारंटी है कि ज़्यादा मुनाफे के लिए गैर-खाद्य फसल नहीं उगाएंगे? इन सवालों के जवाब मुश्किल हों मगर आगे बढ़ने से पहले ज़रूरी हैं।

शोधकर्ताओं को यह डाटा *लैंड-मेट्रिक्स* वेबसाइट से मिला है जो अंतर्राष्ट्रीय और देशी ज़मीन के सौदों की सूचना रखता है। इस वेबसाइट पर मीडिया में प्रकाशित सौदे शामिल हैं और अन्य स्रोतों से भी डाटा लिया गया है। साथ में कोई भी, कहीं भी हो रहे सौदों के बारे में सूचना भेज सकता है और वेबसाइट के शोधकर्ता उसकी छानबीन करते हैं। हो सकता है कि उनके पास सारे सौदों की सूची न हो - उनका डाटा अधूरा हो सकता है। रूली और ड-ओरिको ने अपने विश्लेषण में सिर्फ उन सौदों को शामिल किया है जो पूरे हो चुके हैं और जिनकी ज़मीन के क्षेत्रफल की जानकारी पक्की है। फिर उन्होंने अनुमान लगाया कि अब तक लैंड-ग्रैब द्वारा खरीदी हुई ज़मीन पर लगभग 19 से 55 करोड़ लोगों के लिए खाद्य पदार्थ उगाया जा सकता है। अगर ज़मीन पर उच्चतम फसल हो तो 55 करोड़ लोगों के लिए खाद्यान्न पैदा हो सकता है और अगर सन 2000 के स्तर पर उपज हो तो 19 करोड़ लोगों के पोषण का इन्तज़ाम हो सकता है। 19 या 55 करोड़, यह तो बढ़िया खबर है कि विश्व की खाद्य असुरक्षा का काफी हद तक हल हो सकता है।

यह तो स्पष्ट है कि जिन देशों में ऐसे बड़े सौदे हो रहे हैं वहां कृषि और सशक्त बनाई जा सकती है। छोटे खेतों में फसल उगाने वाले गरीब किसान पैसों की कमी के कारण उपज बढ़ाने के तरीकों को नहीं अपना पाते हैं। नतीजा यह है कि उनके खेतों में फसल उच्चतम उपज से काफी कम होती है - वर्तमान में यथेष्ट से कम उपज एशिया और

अफ्रीका के देशों में होती है। यानी उपज बढ़ाने की सम्भावना तो है। लेकिन यह उपज स्थानीय लोगों के पास पहुंचेगी, यह कहना मुश्किल है।

निवेशक अपने मुनाफे का ही सोचते हैं और फसल वहां बेचते हैं जहां मुनाफा सबसे अधिक हो। इसमें कोई बुरी बात न होती अगर स्थानीय लोगों का नुकसान न होता। दिक्कत यह है कि जिन देशों में, जिन इलाकों में ऐसे लैंड-ग्रैब हुए हैं, वहां के लोग गरीबी और भूख से त्रस्त हैं। ज़मीन बेचकर उनका अल्पकालिक फायदा तो हुआ होगा लेकिन उनकी दीर्घकालीन खाद्य असुरक्षा तो और भी गम्भीर हो गई है।

मसलन कतर देश की सिर्फ 1 प्रतिशत ज़मीन उपजाऊ है। तो कतर की सरकार ने अपनी खाद्य सुरक्षा के लिए केन्या, सूडान, वियतनाम और कम्बोडिया में 40 हज़ार हैक्टर ज़मीन तेल, गेहूं, धान और मक्का उगाने के लिए खरीदी है। ज़ाहिर है, कतर के निवासियों के लिए इन्तज़ाम हो गया है, लेकिन सूडान वगैरह के निवासियों का क्या होगा? कतर द्वारा सूडान में पैदा फसल के स्थानीय लोगों तक पहुंचने की सम्भावना कम ही है।

फिर ज़मीन अक्सर हज़ारों छोटे व निर्वाह स्तर की खेती करने वाले किसानों से खरीदी गई हैं। अगर यही हाल रहा तो छोटे किसानों के लिए भविष्य में कम जगह होगी। तो समस्या सिर्फ ज़मीन या उपज के भविष्य की नहीं है, किसानों के भविष्य की भी है।

इससे जुड़ा एक और मसला है न्यायपूर्ण सौदे का। कुछ देशों में देशी सरकारें ऐसे सौदे करवाने में विदेशियों की मदद इस तरह से कर रही हैं कि किसानों से ज़मीन छुड़वाई जा रही है, बल प्रयोग हो रहा है ताकि कम दामों पर किसान ज़मीन बेचने पर विवश हो जाएं। कई बार किसानों को पुनर्स्थापन में मदद भी नहीं मिलती।

इन सब समस्याओं को देखते हुए देशी सरकारों और विदेशी खरीददारों की नीयत पर शंका होती है। अगर लोगों के पास पूरी जानकारी होती, ऐसे सौदों के निहितार्थों की समझ होती तो क्या पता, ज़मीन बेचने का निर्णय लेते ही नहीं। या जहां पर लोगों की पूरी सहमति है, वहां भी सरकार को तो दूरदर्शी होना चाहिए - आखिर उपनिवेश काल के बुरे प्रभावों के बारे में इतिहास से तो हम सीख ही सकते हैं। उदाहरण के लिए पाकिस्तान में 10 लाख हैक्टर कृषि ज़मीन को विदेशी निवेशकों के हवाले कर दिया गया है। पाकिस्तान की आधी आबादी खाद्य असुरक्षा का सामना कर रही है। ऐसे में, पाकिस्तान सरकार का निवेश आकर्षित करने के लिए यह निर्णय उनके लोगों के लिए नुकसानदेह हो सकता है। मगर पाकिस्तान सरकार आगे भी ऐसा करने की सोच रही है।

तो भारत की क्या भूमिका है? लैंड मेट्रिक्स वेबसाइट पर दिए गए डाटा के मुताबिक विदेशी निवेशकों का हमारे देश में दखल अभी तक कम है। लेकिन गौरतलब है कि भारतीय कंपनियां दूसरे देशों में कृषि ज़मीन खरीद रही हैं, लैंड-ग्रैब कर रही हैं। उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक हमारी कंपनियों ने मोज़ाम्बिक, मैडागास्कर, मलेशिया, इंडोनेशिया, इथियोपिया और सूडान समेत 17 देशों में 9 लाख हैक्टर से ज़्यादा ज़मीन खरीदी है। इसमें से 9 देशों में भारतीय कंपनियों ने खाद्य फसल के लिए 2.88 लाख हैक्टर ज़मीन खरीदी है। इथियोपिया में तो भारतीय कंपनियों ने 1 लाख हैक्टर से ज़्यादा खाद्य फसल की ज़मीन खरीदी है। अन्य किस्म की ज़मीन को जोड़ दें तो कुल मिलाकर इन कंपनियों ने 4 लाख हैक्टर से भी ज़्यादा ज़मीन खरीदी है या फिर लम्बे समय के लिए पट्टा लिया है। तो लैंड-ग्रैब के मामले में हम सिर्फ पीड़ित नहीं हैं, हम समस्या का हिस्सा भी हैं।

कुल मिलाकर इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि अगर हम खाद्य सुरक्षा के लिए उपज बढ़ाना चाहते हैं तो कृषि में अधिक निवेश की ज़रूरत है। लेकिन निवेश का क्या सिर्फ यही तरीका है - लैंड-ग्रैब? क्या लैंड-ग्रैब के नियम सिर्फ खरीददारों और अल्पकालीन आर्थिक फायदों की बजाय स्थानीय लोगों के दीर्घकालीन हितों के अनुरूप बनाए जा सकते हैं? क्या ऐसे सौदों में ऐसे सुरक्षा प्रावधान बनाए जा सकते हैं जिनसे स्थानीय समाजों का नुकसान न हो? कई लोगों का मानना है कि ऐसे प्रावधान होने तक कृषि ज़मीन के लैंड-ग्रैब पर रोक होनी चाहिए। ***(स्रोत फीचर्स)***